(2008) 2 एस सी आर 610

संभागीय वन अधिकारी, कोठागुडेम और अन्य

बनाम

मधुसूदन राव और अन्य

(दीवानी अपील संख्या 1104/2008)

08 फरवरी 2008

(ए.के. माथुर व अल्तमस कबीर, जे०जे०)

सेवा कानून:

दुराचार - अनुशासनात्मक कार्यवाही - अधिरोपित दण्ड - अपील और/या निगरानी-अपीलीय/निगरानी प्राधिकारी द्वारा अधीनस्थ प्राधिकरण के आदेश को पुष्टि करते समय सकारण आदेश किये जाने की आवश्यकता हैं - अभिनिर्धारित : अपराधी अधिकारी को कम से कम न्याय हित में अपील/निगरानी प्राधिकारी के उसकी अपील और/ या निगरानी खारिज करते समय प्रयोग किये गये न्यायिक मस्तिष्क को जानने का अधिकार है - हालांकि कोई विस्तृत कारण दिये जाने आवश्यक नहीं हैं, लेकिन

अधीनस्थ प्राधिकरण के विचारों की पुष्टि करने वाला आदेश किये जाते समय कुछ संक्षिप्त कारण दिये जाने चाहिए -

आंध्रप्रदेश सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1991 -नियम आरआर० 18 (2), 37 (2)।

उत्तरदाता को "वनपाल" के रूप में नियुक्त किया गया था। उसके खिलाफ सरकारी निधियों के गबन के आरोप के लिए अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गयी थी। अनुशासनात्मक प्राधिकारी अर्थात् प्रभागीय वन अधिकारी द्वारा प्रत्यर्थी को दोषी पाया गया और उस पर वार्षिक वेतनवृद्धि आदि को रोकने का दंड लगाया। प्रतिवादी ने अपील दायर की।

अपीलीय प्राधिकारी अर्थात् वन सरंक्षक ने दंड को बढाकर प्रतिवादी को सेवा से बर्खास्त कर दिया। मुख्य वन सरंक्षक के समक्ष प्रत्यर्थी द्वारा दायर पुनरीक्षण याचिका को आंशिक रूप से "सेवा से बर्खास्तगी" को "सेवा से हटाने" में संशोधित किये जाने की हद तक अनुमति दी गयी। उत्तरदाता ने प्रशासनिक न्यायाधिकरण के समक्ष इसे चुनौती दी जिन्होंने अधीनस्थ प्राधिकरणों के आदेशों को यह कहते हुए अपास्त किया कि उन्होंने बढी हुई सजा देते समय अपने स्वतंत्र विवेकाधिकार का प्रयोग नहीं किया हैं।

`उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि अपीलीय प्राधिकारी को दंड को बढ़ाने की शक्ति है, परंतु अपीलीय प्राधिकारी का यह भी दायित्व था कि वह आधारों पर भी विचार करें और तब ही अपील खारिज करें। न्यायालय द्वारा अपीलार्थियों की रिट याचिका को खारिज किया तथा यह भी अभिनिर्धारित किया कि उसी कार्यवाही में, अपीलीय प्राधिकारी ने उत्तरदाता द्वारा उठाए गए आधारों को विचार में लिये बिना दंड को बढा दिया जो कि अवैध और कानून के विपरीत था।

हस्तगत अपील में यह तर्क दिया गया कि किसी आदेश को पुष्टि करते समय, जिसके विरुद्ध अपील प्रस्तुत की गई हैं, अपीलीय प्राधिकारी को सकारण आदेश पारित करने की आवश्यकता नहीं थी जबकि आक्षेपित आदेश उसके समक्ष था और वह केवल उसी का समर्थन कर रहा था।

अपील खारिज करते हुए न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया-

1.1 संबंधित पक्षो की ओंर से की गयी दलीलों पर विचार करने के बाद और उस विस्तृत तरीके को ध्यान में रखते हुए जिसमें प्रशासनिक न्यायाधिकरण ने मामले को निपटाया था जिसमें प्रतिवादी द्वारा प्राप्त धन के वितरण के संबंध में दिये गये स्पष्टीकरण भी शामिल थे, प्रशासनिक प्राधिकरण द्वारा लिये गये दृष्टिकोण, जो उच्च न्यायालय से अनुमोदित हैं, से भिन्न दृष्टिकोण लिये जाने का कोई कारण नहीं है।

निःसन्देह, प्रभागीय वन अधिकारी ने मामले को विस्तार से निपटाया लेकिन अपीलीय प्राधिकारी का भी यह कर्तव्य था कि वह प्रतिवादी द्वारा की गयी अपील को खारिज करने के लिए कम से कम कुछ कारण बताये।

राज्य में वन विभाग के सर्वाेच्च प्राधिकारी होने के नाते पुनरीक्षण प्राधिकारी पर इसी तरह का कर्तव्य डाला गया था। यहां तक कि पुनरीक्षण प्राधिकारी ने केवल यह संकेत दिया कि प्रभागीय वन अधिकारी के निर्णय की जांच वन सरंक्षक खम्मम द्वारा की गयी थी जिसमें दुर्विनियोग का आरोप स्पष्ट रूप से साबित हुआ था। उन्होंने ने भी बचाव पक्ष के मामले पर विचार नहीं किया और केवल इसका समर्थन करते हुए बर्खास्तगी की सजा को घटाकर सेवा से हटाया। (पैरा 18)

1.2 एक अपीलीय या पुनरीक्षण प्राधिकरण के लिए अधीनस्थ मंच के आदेश से सहमति और पुष्टि करने के आदेश में विस्तृत कारण दिये जाने की आवश्यकता नहीं है लेकिन न्याय हित में अपराधी अधिकारी को कम से कम अपीलीय या निगरानी प्राधिकारी के उसकी अपील और/अथवा निगरानी खारिज करने में प्रयोग हुए मस्तिष्क को जानने का अधिकार हैं। यह सही हैं कि विस्तृत कारण दिये जाने की आवश्यकता नहीं हैं लेकिन कुछ संक्षिप्त कारणों का संकेत निचले मंच के विचारों की पुष्टि करने के आदेश में भी दिया जाना चाहिए। (पैरा 19)

मद्रास राज्य बनाम ए.आर. श्रीनिवासन एआईआर 1966 एस.सी. 1827, सोमदत्त दत्ता बनाम भारत संघ व अन्य 1969 2 एस.सी.आर. 177, ताराचंद खत्री बनाम दिल्ली नगर निगम व अन्य 1977 1 एस.सी.सी. 472, आर.पी. भट्ट बनाम भारत संघ व अन्य 1986 2 एस.सी.सी. 651 और रामचंद्र बनाम भारत संघ व अन्य (1986) 3 एस.सी.सी. 103 - संदर्भित मामले।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारिता : सिविल अपील संख्या 1104/2008

आंध्रप्रदेश उच्च न्यायालय के रिट याचिका संख्या 3817/2005 में दिये गये निर्णय एवं आदेश दिनांक 09.03.2005 से उद्भूत।

एच.एस. गुरुराजा राव, मनोज सक्सेना, रजनीश कुमार सिंह, राहुल शुक्ला और टी.वी. जार्ज - अपीलकर्ता की ओर से।

डी. रामकृष्णा रेड्डी और टी. अनामिका - उत्तरदाता की ओर से।

न्यायालय का निर्णय अल्तमस कबीर, जे० द्वारा प्रदत्त किया गया।

1. अनुमति प्रदत्त की गई। विलंब क्षमा किया गया।

2. संभागीय वन अधिकारी, कोठागुडेम और वन मंत्रालय के अन्य अधिकारी आंध्रप्रदेश सरकार के आग्रह पर यह अपील आंध्रप्रदेश उच्च न्यायालय में अपीलकर्ताओं

द्वारा दायर रिट याचिका संख्या 3817/2005 के आंध्रप्रदेश उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा 09.03.2005 को पारित निर्णय और आदेश् के विरुद्ध है जिसे उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था।

3. आंध्रप्रदेश प्रशासनिक न्यायाधिकरण, हैदराबाद द्वारा 2002 के ओए नंबर 1157 में पारित आदेश दिनांक 23.11.2014 को चुनौती देते हुए रिट याचिका दायर की गई थी जिसे स्वीकार करते हुए निर्देश दिया गया था कि प्रतिवादी को सेवा में बहाल किया जाए।

4. प्रकट की गई सामग्री से ऐसा प्रतीत होता हैं कि यहां उत्तरदाता को दिनांक 07.04.1994 को "वनपाल" के रूप में नियुक्त किया गया था और 07.04.1994 से 24.08.1996 तक खंड कोमारारम में तैनात किया गया था। अपीलार्थियों के अनुसार, उक्त अवधि के दौरान अपीलार्थी को आंध्रप्रदेश वानिकी परियोजना के तहत विभिन्न कार्यों को करने के लिए अग्रिम धन दिया गया था। इतनी धनराशि प्राप्त करने के बावजूद, उसने उक्त कार्य नहीं किया और उनके खिलाफ निम्नलिखित आरोपों पर अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गयी।

“1. (ए) सरकारी धनराशि को संयुक्त खाते (बैंक) में जमा न करके द्वेषपूर्ण इरादे से कर्तव्य की उपेक्षा की गई, जिससे दस हजार रूपये के सरकारी धन का गबन हुआ।

(बी) झूठा खर्च करके और कार्य निष्पादित किये बिना कूटरचित वाउचर प्रस्तुत करके 54625 रूपये के सरकारी धन का गबन किया गया।

(सी) मस्टरोल का रखरखाव नहीं करने और मजदूरों को 4865 रूपये वेतन का भुगतान नहीं करने के परिणामस्वरूप सरकारी धन का गबन हुआ।

2. अभियुक्त को सीएफ 140 की रसीद जारी नहीं करके सी शुल्क के पेटे एकत्रित किये गये 580 रूपये का दुर्विनियोग किया।

संभागीय वन अधिकारी द्वारा दोनो आरोपों में दोषी पाये जाने पर उतरदाता को निम्नलिखित सजा दी गयी -

(।) 500 रूपये प्रतिमाह 130 किश्तों में 64725 रुपये के सरकारी घाटे की वसूली के अलावा 5 वार्षिक ग्रेड वेतन वृद्धि संचयी प्रभाव से रोक दी गयी थी।

(।।) 24.08.1996 से 17.01.1997 तक की निलंबन अवधि को प्रतिवादी को उपलब्ध अर्जित अवकाश के लिए नियमित किया गया।"

5. प्रभागीय वन अधिकारी, कोठागुडेम द्वारा पारित सजा के उक्त आदेश से व्यथित होकर उतरदाता ने वन सरंक्षक, खम्मम के समक्ष अपील दायर की। सामग्रियो का अध्ययन करने पर प्राधिकारी का यह विचार था कि यह सरकारी धन के गबन का एक स्पष्ट मामला था, जिसमें प्रभागीय वन अधिकारी द्वारा दी गयी सजा से अधिक सजा का प्रावधान था।

इसलिए प्रतिवादी का मामला आंध्रप्रदेश सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम 1991 के नियम 18(2) के तहत फिर से खोल दिया गया और नियम 37(2)(5) के तहत प्रतिवादी को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया कि उसे सेवा से क्यों नहीं हटाया जाना चाहिए। उत्तरदाता द्वारा प्रस्तुत जवाब पर विचार करने के पष्चात् वन सरंक्षक ने दिनांक 11.07.2001 को उत्तरदाता को सेवा से बर्खास्त करने का आदेश दिया।

6. उत्तरदाता द्वारा प्रधान मुख्य वन सरंक्षक आंध्रप्रदेश के समक्ष एक पुनरीक्षण याचिका प्रस्तुत की गयी जो आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए "सेवा से बर्खास्तगी" को "सेवा से हटाने" में संशोधित किये जाने की हद तक अनुमत की गयी। यह संकेत दिया

जा सकता हैं कि न तो वन सरंक्षक खम्मम सर्किल, खम्मम और न ही मुख्य वन सरंक्षक आंध्रप्रदेश ने अपने अलग अलग आदेशों में कोई कारण प्रभागीय वन अधिकारी द्वारा लगाये गये दण्ड को बनाये रखने और उसके बाद वन सरंक्षक द्वारा बर्खास्तगी की बढी हुई सजा पारित करने में नहीं दिया।

7. उक्त आदेशों के विरुद्ध उत्तरदाता ने आंध्रप्रदेश न्यायाधिकरण का रूख किया जिसने मामले पर विस्तार से विचार करते हुए मामले के विचार के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं को तैयार किया :-

(ए) क्या अपीलीय प्राधिकारी का आदेश दूषित हैं और अपास्त किये जाने योग्य हैं?

(बी) क्या कोई प्रक्रियात्मक खामियां हैं, जो अपीलीय प्राधिकारी द्वारा इंगित नहीं की गयी हैं?

(सी) क्या देरी को माफ किये बिना अपील पर विचार करना बुरा हैं?

(डी) इस मामले में क्या निर्णय हैं और क्या लिया गया हैं?

8. प्राधिकरण ने प्रस्तुत प्रस्तुतियों पर सावधानीपूर्वक विचार करने पर अपीलीय प्राधिकारी के दिनांक 11.07.2001 के आदेश में जो कुछ भी पाया गया, प्रत्यर्थी के खिलाफ लगाये गये आरोपों का वर्णन था और उसने मामले के निस्तारण के

लिए आगे बढ़ने से पहले स्वतंत्र रूप से अपने सामने की सामग्री पर अपना मस्तिष्क नहीं लगाया था। प्राधिकरण ने इस तथ्य पर भी ध्यान दिया कि जांच अधिकारी की रिपोर्ट की एक प्रति उत्तरदाता को प्रदान नहीं की गयी थी जबकि यह आंध्रप्रदेश सिविल सेवा(वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम के नियम 20 के तहत अनिवार्य था। यह देखा गया कि अपीलीय प्राधिकारी द्वारा उक्त पहलू पर भी विचार नहीं किया गया था।

9. यह भी नोट किया गया कि सेवा से हटाने का आदेश पारित करने के मामले में लोक सेवा आयोग से परामर्श करना सरकार की ओर से अनिवार्य था, लेकिन ऐसा परामर्श होना प्रकट नहीं हुआ क्योंकि दायर जवाबी हल्फनामा इस संबंध में मौन था।

10. उपरोक्त तथ्यों पर विचार करने पर प्राधिकरण ने यह निष्कर्ष निकाला कि अपीलीय प्राधिकारी ने सेवा से निष्कासन की बढी हुई सजा देते समय अपने स्वतंत्र विवेकाधिकार का प्रयोग नहीं किया।

11. अपीलकर्ताओं द्वारा दायर रिट याचिका में प्रशासनिक न्यायाधिकरण के तर्क पर उच्च न्यायालय द्वारा विधिवत् विचार और समर्थन किया गया। उच्च न्यायालय ने कहा कि यद्यपि अपीलीय प्राधिकारी के पास सजा बढ़ाने की शक्ति है, लेकिन अपीलीय प्राधिकारी का यह भी कर्तव्य है कि वह आधारों पर विचार करे और उसके

बाद ही अपील को खारिज करे। उच्च न्यायालय ने यह भी देखा कि हालांकि उसी कार्यवाही में, अपीलीय प्राधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि दण्ड को बढाने की आवश्यकता थी, लेकिन उत्तरदाताओं द्वारा उठाये गये आधारों पर विचार किये बिना उन्होंने केवल दण्ड को बढ़ा दिया जो कि अवैध और कानून के विपरीत था। उक्त तर्क पर उच्च न्यायालय ने अपीलार्थियों द्वारा दायर रिट याचिका को खारिज कर दिया।

12. अपील के समर्थन में पेश होते हुए विद्धान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री एस 0 एस 0 गुरूराजा राव ने कहा कि जिस आदेश के खिलाफ अपील की गयी हैं उसकी पुष्टि करते समय अपील प्राधिकारी को एक सकारण आदेश पारित करने की आवश्यकता नहीं हैं क्योंकि विवादित आदेश पहले से उसके समक्ष था और वह केवल उसी का समर्थन कर रहे थे।

13. श्री गुरूराजा राव ने अपने उपरोक्त निवेदन के समर्थन में इस न्यायालय के संविधान पीठ के फैसले मद्रास राज्य बनाम ए. आर. श्रीनिवासन (ए.आई.आर. 1996 एस.सी. 1827) का उल्लेख किया, जो एक सिविल सेवक की अनिवार्य सेवानिवृत्ति से जुड़ा मामला था, जिसमें उपरोक्त प्रश्न उत्पन्न हुआ था। श्री सीतलवाड़ के इस तर्क को खारिज करते हुए कि किसी आदेश के पुष्टि करते समय भी, अर्धन्यायिक चरित्र में कार्य करने वाले प्राधिकारी को कुछ कारण बताने चाहिए कि उसने निचले मंच के निष्कर्षों को क्यों स्वीकार किया

इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि जो सामग्री राज्य सरकार को उपलब्ध हैं, यह सुझाव देना अनुचित हैं कि राज्य सरकार को अपने कारणों को दर्ज करना चाहिए कि उसने न्यायाधिकरण के निष्कर्षों को क्यों स्वीकार किया। इस न्यायालय ने आगे कहा कि निचले मंच के आदेश से असहमत होते हुए भी राज्य सरकार को केवल कारण बताने की आवश्यकता थी कि वह भिन्न क्यों हैं, हालांकि यह आवश्यक नहीं हैं कि ऐसे कारण विस्तृत विवरण सहित या विस्तृत हो। संविधान पीठ ने यह निष्कर्ष निकाला कि जहां राज्य सरकार न्यायाधिकरण के निष्कर्षों से सहमत हैं, जो दोषी अधिकारी के खिलाफ हैं तो कानूनी रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि राज्य सरकार दोषी अधिकारी के खिलाफ प्राधिकरण के निष्कर्षों के अनुरूप दण्ड नहीं लगा सकती है, जब तक कि उसने यह दिखाने के लिए कारण नहीं दिये कि उसने उक्त निष्कर्षों को क्यों स्वीकार किया।

14. इस संबंध में इस न्यायालय के दो अन्य निर्णयो का संदर्भ दिया गया,

(I) सोमदत दत्ता बनाम भारत संघ एवं अन्य (1996)2 एस.सी.आर. 177, और

(II) ताराचंद खत्री बनाम दिल्ली नगर निगम और अन्य (1977)1 एस.सी.सी. 472।

जहां उपरोक्त भावनाओं को दोहराया गया था। श्री गुरूराजा राव ने आग्रह किया कि चूंकि यह सरकारी धन के गबन से जुड़ा एक गंभीर मामला था, इसलिए अपीलीय व पुनरीक्षण अधिकारियों द्वारा पारित आदेशों में कमी को घातक नहीं माना जाना चाहिए क्योंकि प्रभागीय वन अधिकारी ने आरोपों और उत्तरदाताओं की प्रतिक्रिया के साथ बहुत विस्तार से निपटाया था।

15. हालांकि प्रतिवादी की ओंर से उपस्थित विद्धान अधिवक्ता श्री डी. रामकृष्ण रेड्डी ने कहा कि प्रशासनिक न्यायाधिकरण व उच्च न्यायालय दोनों सही ढंग से इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि उत्तरदाता द्वारा प्रस्तुत अपील व पुनरीक्षण पर न तो अपीलीय प्राधिकारी और न ही पुनरीक्षण प्राधिकारी ने अपने मस्तिष्क का प्रयोग किया था और उक्त अधिकारियों द्वारा पारित आदेशों को इस आधार पर प्रशासनिक न्यायाधिकरण द्वारा सही ढंग से अपास्त कर दिया गया था।

उन्होंने आगे आग्रह किया कि आंध्रप्रदेश सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण व अपील) नियमों के कुछ अनिवार्य प्रावधानों का पालन नहीं किया गया था और जैसा कि प्राधिकरण और उच्च न्यायालय दोनों द्वारा सही बताया था, हालांकि वन सरंक्षक को अपीलीय प्राधिकारी के रूप में संभागीय वन सरंक्षक द्वारा दी गयी सजा को वृद्धि करने का अधिकार था, उसे बिना कोई कारण बताये केवल सजा बढ़ाने के बजाय और अधिक एप्लीकेशन के साथ कारण बताओं नोटिस के जवाब से निपटने की आवश्यकता

थी। उन्होंने यह भी आग्रह किया कि उपरोक्त नियमों के नियम 20 के तहत जांच अधिकारी की रिपोर्ट उपलब्ध नहीं कराना एक और घातक दोष हैं। उन्होंने आग्रह किया कि उच्च न्यायालय के आदेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्कता नहीं है और अपील खारिज की जानी चाहिए।

16. अपनी दलीलों के समर्थन में श्री रामकृष्ण रेड्डी ने आर.पी. भट्ट बनाम भारत संघ एवं अन्य (1986)2 एस.सी.सी. 651, में इस न्यायालय के निर्णय का उल्लेख किया जिसमें यह देखा गया कि केन्द्रीय सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण व अपील) नियमों के तहत किसी भी दण्ड को बढ़ाने वाले आदेश के खिलाफ अपील पर विचार करते समय नियम 27(2) की आवश्यकता का अनुपालन किया जाना चाहिए और विचार का मतलब इस बात की संतुष्टि होगी कि क्या नियमों में निर्धारित प्रक्रिया का अनुपालन किया गया था और यदि अनुपालन नहीं किया गया तो क्या इस तरह के गैर अनुपालन के परिणामस्वरूप संविधान के किसी भी प्रावधान का उल्लंघन हुआ या न्याय की विफलता हुई।

श्री रामकृष्ण रेड्डी ने कहा कि श्री गुरूराजा राव द्वारा उद्धृत तीन मामलों को पहले ही संदर्भित किया जा चुका हैं और अन्ततः केन्द्रीय सिविल सेवा नियम 1965 के नियम 27(2) की आवश्यकताओं पर अपना मस्तिष्क लगाने के बाद संबंधित प्राधिकारी को अपील को नये सिरे से निपटाने के निर्देश के साथ अपील अनुज्ञात की गयी थी।

17. श्री रेड्डी द्वारा अगला संदर्भित मामला रामचंद्र बनाम भारत संघ और अन्य (1986)3 एस.सी.सी. 103 है, जिसमें आर.पी. भट्ट के मामले (उपरोक्त) में दिये निर्णय का पालन किया गया।

18. संबंधित पक्षों की ओंर से की गयी दलीलों पर विचार करने और उस विस्तृत तरीके को ध्यान में रखते हुए जिसके द्वारा आंध्रप्रदेश प्रशासनिक न्यायाधिकरण ने मामले को निपटाया था, जिसमें प्रतिवादी द्वारा प्राप्त धन के वितरण के संबंध में दिये गये स्पष्टीकरण भी शामिल थे, प्रशासनिक न्यायाधिकरण द्वारा अपनाये गये और उच्च न्यायालय द्वारा अनुमोदित दृष्टिकोण से असहमत होने का हम कोई कारण नहीं देखते है। निःसन्देह, संभागीय वन अधिकारी ने मामले को विस्तार से निपटाया, लेकिन यह अपीलीय प्राधिकरण का भी कर्तव्य था कि वह प्रतिवादी द्वारा की गई अपील को खारिज करने के लिए कम से कम कुछ कारण बताये।

राज्य के वन विभाग के सर्वोच्च प्राधिकारी होने के नाते पुनरीक्षण प्राधिकरण पर भी इसी तरह का कर्तव्य डाला गया था। दुर्भाग्य से, यहां तक कि पुनरीक्षण प्राधिकारी ने भी केवल यह संकेत दिया हैं कि संभागीय वन अधिकारी के निर्णय की जांच वन सरंक्षक, खम्मम द्वारा की गई थी जिसमें गबन का आरोप स्पष्ट रूप से साबित हुआ था। उन्होंने ने भी प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत बचाव मामले पर विचार नहीं किया और केवल बर्खास्तगी की सजा का समर्थन किया, हालांकि इसे सेवा से हटाने में बदल दिया।

19. इसमें कोई संदेह नहीं हैं तथा यह सच भी हैं कि एक अपीलीय या पुनरीक्षण प्राधिकारी को निचले मंच द्वारा पारित आदेश से सहमत होने और पुष्टि करने के लिए विस्तृत कारण देने की आवश्यकता नहीं हैं लेकिन, हमारे विचार में, न्याय के हित में दोषी अधिकारी कम से कम उसकी अपील और/या पुनरीक्षण को खारिज करने में अपीलीय या पुनरीक्षण प्राधिकारी के मस्तिष्क को जानने के लिए हकदार हैं।

यह सच हैं कि कोई विस्तृत कारण बताने की आवश्यकता नहीं हैं लेकिन निचले मंच के विचारों की पुष्टि करने वाले आदेश में भी कुछ संक्षिप्त कारण बताये जाने चाहिए।

20. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हम उच्च न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप करने के इच्छुक नहीं है और तद्नुसार व्यय के बाबत् कोई आदेश किये बिना अपील खारिज की जाती हैं।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक डाॅ. मनोज जोशी द्वारा किया गया है।

अस्वीकार: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।